सम्मुख सुदीप अहलूवालिया से पहले, न्यायामूर्ति.

मेसर्स इंटरनेशनल कॉइल लिमिटेड-याचिकाकर्ता

बनाम

मेसर्स डीएलएफ साइबर सिटी डेवलपर्स लिमिटेड-उत्तरदाता

2019 का सीआर No.735

24 मई, 2019

भारत का संविधान, 1950-कला।226 और 227-मध्यस्थता और सुलह अधिनियम, 1996-धारा 8,11,16,34-हरियाणा शहरी (किराया और बेदखली नियंत्रण) अधिनियम, 1973-कला के तहत पुनरीक्षण याचिका।226/227 मध्यस्थता और सुलह अधिनियम, 1996 के तहत मध्यस्थता में किए गए दावे की अस्वीकृति के लिए याचिकाकर्ता के आवेदन को खारिज करने वाले मध्यस्थ के आदेश के खिलाफ संविधान का प्रावधान।

यह अभिनिर्धारित किया गया कि धारा 16 (2) (3) (4) और (5) को सावधानीपूर्वक पढ़ने से मध्यस्थ न्यायाधिकरण की अधिकारिता को चुनौती मिलती है, या यह याचिका कि न्यायाधिकरण अपने प्राधिकरण के दायरे से बाहर जा रहा है, को जल्द से जल्द लिया जाना चाहिए, विशेष रूप से बचाव का बयान प्रस्तुत करने के बाद और जैसे ही कथित रूप से न्यायाधिकरण के अधिकार के दायरे से बाहर का मामला उठाया जाता है। बेशक, न्यायाधिकरण अपने विवेकाधिकार में धारा 16 (4) के अनुसार ऐसी याचिकाओं को स्वीकार कर सकता है यदि वह देरी को उचित समझता है।लेकिन धारा 16 (5) के अनुसार जहां न्यायाधिकरण इनमें से किसी भी याचिका को खारिज करने का निर्णय लेता है, वहां मध्यस्थता कार्यवाही जारी रखने और मध्यस्थता पुरस्कार देने की आवश्यकता होती है।इसके बाद धारा 16 (6) के अनुसार, पीड़ित पक्ष अधिनियम की धारा 34 के अनुसार इस तरह के पुरस्कार को अलग करने के लिए आवेदन कर सकता है। इसलिए, यह देखा गया है कि धारा 16 भी किसी पक्ष के लिए अंतिम निर्णय पारित करने से पहले मध्यस्थता कार्यवाही को चुनौती देने के लिए किसी भी गुंजाइश

पर विचार नहीं करती है, एक बार जब न्यायाधिकरण यह निर्धारित कर लेता है कि उसके पास विवाद पर विचार करने का अधिकार क्षेत्र है। (पैरा 24)

मुकेश राव, अधिवक्ता

याचिकाकर्ता के लिए।

R.S.Rai, हर्ष बंजर के साथ वरिष्ठ अधिवक्ता, प्रतिवादी के लिए अधिवक्ता।

सुदीप अहलूवालिया, न्यायामूर्ति।

(1) इस संशोधन याचिका को मध्यस्थ श्री मनीष मखीजा द्वारा वर्तमान याचिकाकर्ता, जो मध्यस्थता कार्यवाही में प्रतिवादी हैं, की ओर से दायर एक आवेदन पर पारित दिनांक 15.11.2018 के विवादित आदेश के खिलाफ प्राथमिकता दी गई है, जिसमें उसने मध्यस्थता में अपने द्वारा किए गए दावे को अस्वीकार करने की मांग की थी।

(2) संबंधित आवेदन (अनुलग्नक पी-10) में, याचिकाकर्ता ने मध्यस्थता कार्यवाही की स्थिरता के साथ-साथ मध्यस्थ के अधिकार क्षेत्र को भी चुनौती दी थी।वास्तव में, याचिकाकर्ता की ओर से यह तर्क दिया गया था कि यह 31.5.2016 पर पक्षों के बीच किए गए पंजीकृत पट्टा विलेख के संदर्भ में प्रतिवादी के तहत एक सांविधिक किरायेदार है।याचिकाकर्ता के अनुसार, हरियाणा शहरी (किराया और बेदखली नियंत्रण) अधिनियम, 1973 के प्रावधान उसके द्वारा पट्टे पर लिए गए परिसरों पर लागू थे, और उनके संबंधों को नियंत्रित करने के लिए ऐसे विशेष विधान के अस्तित्व को देखते हुए, मामले को मध्यस्थता के लिए नहीं भेजा जा सकता था।इसके अलावा, याचिकाकर्ता की ओर से यह भी तर्क दिया गया कि पट्टा विलेख के प्रासंगिक खंड 10 को चतुराई से अंतःस्थापित किया गया था ताकि प्रतिवादी को अपनी पसंद के मध्यस्थ की एकतरफा नियुक्ति करने में सक्षम बनाया जा सके, जो न्याय, समानता और निष्पक्षता के सिद्धांतों के साथ-साथ प्राकृतिक न्याय के सिद्धांत के भी विपरीत था और किसी भी मामले में, विवादित दावे को मध्यस्थता में नहीं उठाया जा सकता था, क्योंकि याचिकाकर्ता द्वारा प्रतिवादी के खिलाफ पहले से ही एक दीवानी मुकदमा दायर किया जा चुका था।

सिविल जज (जूनियर डिवीजन), गुरुग्राम, जिसमें प्रतिवादी को याचिकाकर्ता को ध्वस्त परिसर से बेदखल करने से रोक दिया गया था, और जब मध्यस्थता कार्यवाही लागू की गई थी तब भी आदेश लागू था।इसलिए याचिकाकर्ता के अनुसार ऐसी कार्यवाहियां अवैध थीं और उन्हें तुरंत वापस लिया जा सकता था।

(3) विवादित आदेश के अनुसार, एल. डी. मध्यस्थ ने अपने आवेदन में याचिकाकर्ता की ओर से उठाई गई दलीलों को खारिज कर दिया।

(4) संशोधन को प्रत्यर्थी/दावेदार की ओर से चुनौती दी गई है, जिसने शुरू में तर्क दिया है कि यह मध्यस्थता अधिनियम के सांविधिक प्रावधानों को देखते हुए गैर-रखरखाव योग्य है, जो मध्यस्थता और सुलह अधिनियम (इसके बाद "मध्यस्थता अधिनियम"के रूप में संदर्भित), 1996 में विशेष रूप से अनुमति दिए जाने के अलावा मध्यस्थता कार्यवाही में न्यायिक हस्तक्षेप को प्रतिबंधित करने का प्रभाव रखते हैं।अन्यथा भी, यह तर्क दिया गया है कि एल. डी. का निर्णय। मध्यस्थ का यह मानना कि संबंधित पट्टा विलेख में उल्लिखित मध्यस्थता खंड के संदर्भ में दावे पर विचार करने का अधिकार क्षेत्र उसके पास है, सही है मैसर्स इंटरनेशनल कॉइल लिमिटेड v.मेसर्स डीएलएफ साइबर सिटी

गुणों पर।इस स्तर पर, यह न्यायालय सबसे पहले इस बात पर विचार करने के लिए इच्छुक है कि मध्यस्थता अधिनियम में प्रदान किए गए न्यायिक प्राधिकरणों पर प्रतिबंध को देखते हुए वर्तमान संशोधन स्वयं बनाए रखने योग्य होगा या नहीं।

(5) मध्यस्थता अधिनियम की धारा 5 में प्रावधान है -

“5. न्यायिक हस्तक्षेप का विस्तार-इसके बावजूद

तत्काल प्रवृत्त किसी अन्य विधि में निहित कोई भी बात, इस भाग द्वारा शासित मामलों में, कोई भी न्यायिक प्राधिकारी हस्तक्षेप नहीं करेगा, सिवाय इसके कि इस भाग में ऐसा उपबंध किया गया हो।”

(6) ऊपर उद्धृत धारा 5 के निहितार्थ पर विचार करने के लिए आगे बढ़ने से पहले, मध्यस्थता अधिनियम की धारा 16 का विज्ञापन करना भी उचित है, जो मध्यस्थ

न्यायाधिकरण की अपनी अधिकारिता पर शासन करने की क्षमता से संबंधित है। संबंधित खंड नीचे पुनः प्रस्तुत किया गया है -

"16. इस पर निर्णय देने के लिए मध्यस्थता न्यायाधिकरण की क्षमता

अधिकारिता-(1) मध्यस्थ न्यायाधिकरण मध्यस्थता समझौते के अस्तित्व या वैधता के संबंध में किसी भी आपत्ति पर निर्णय सहित अपनी अधिकारिता पर निर्णय दे सकता है, और उस उद्देश्य के लिए, -

एक मध्यस्थता खंड जो एक अनुबंध का हिस्सा है, उसे अनुबंध की अन्य शर्तों से स्वतंत्र समझौते के रूप में माना जाएगा; और

ख. मध्यस्थता न्यायाधिकरण का यह निर्णय कि अनुबंध अमान्य है, न्यायिक रूप से मध्यस्थता खंड की अयोग्यता को लागू नहीं करेगा।

(2) एक याचिका कि मध्यस्थ न्यायाधिकरण के पास अधिकार क्षेत्र नहीं है, बचाव के बयान को प्रस्तुत करने के बाद नहीं उठाया जाएगा; हालाँकि, एक पक्ष को केवल इस कारण से ऐसी याचिका उठाने से रोका नहीं जाएगा कि उसने एक मध्यस्थ की नियुक्ति की है या उसकी नियुक्ति में भाग लिया है।

(3) एक याचिका कि मध्यस्थता न्यायाधिकरण अपने अधिकार के दायरे को पार कर रहा है, जैसे ही मध्यस्थता कार्यवाही के दौरान कथित रूप से अपने अधिकार के दायरे से बाहर का मामला उठाया जाएगा।

(4) माध्यस्थम न्यायाधिकरण, उप-धारा (2) या उप-धारा (3) में निर्दिष्ट किसी भी मामले में, बाद की याचिका को स्वीकार कर सकता है यदि वह देरी को उचित समझता है।

(5) माध्यस्थम न्यायाधिकरण उप-धारा (2) या उप-धारा (3) में निर्दिष्ट याचिका पर निर्णय लेगा और जहां माध्यस्थम न्यायाधिकरण याचिका को अस्वीकार करने का निर्णय लेता है, वहां माध्यस्थम कार्यवाही जारी रखेगा और एक माध्यस्थम पुरस्कार देगा।

(6) इस तरह के मध्यस्थता पुरस्कार से व्यथित एक पक्ष धारा 34 के अनुसार इस तरह के मध्यस्थता पुरस्कार को अलग करने के लिए आवेदन कर सकता है।"

(7) याचिकाकर्ता के वकील ने तर्क दिया है कि भारत के संविधान के अनुच्छेद 227 के तहत दायर वर्तमान संशोधन ऊपर उद्धृत धारा 5 के आधार पर न्यायिक हस्तक्षेप पर लगाए गए प्रतिबंध के बावजूद बनाए रखने योग्य है।इस तर्क का समर्थन करने के लिए, एल. चंद्र कुमार बनाम के मामले में सर्वोच्च न्यायालय। भारत संघ, 1989 की सिविल अपील No.481 का हवाला दिया गया है। यह था।

इसमें कहा गया है-"यह समान रूप से उनका कर्तव्य है कि वे देखरेख करें कि अधीनस्थ अदालतों और न्यायाधिकरणों का संचालन करने वालों द्वारा दिए गए न्यायिक निर्णय कानूनी शुद्धता और न्यायिक स्वतंत्रता के सख्त मानकों के खिलाफ न हों। उच्च न्यायपालिका के न्यायाधीशों की स्वतंत्रता सुनिश्चित करने वाले संवैधानिक सुरक्षा उपाय अधीनस्थ न्यायपालिका के न्यायाधीशों या सामान्य विधानों द्वारा बनाए गए न्यायाधिकरणों का संचालन करने वालों के लिए उपलब्ध नहीं हैं। नतीजतन, बाद की श्रेणी के न्यायाधीशों को कभी भी संवैधानिक व्याख्या के कार्य के निर्वहन में उच्च न्यायपालिका के लिए पूर्ण और प्रभावी विकल्प नहीं माना जा सकता है।इसलिए हम मानते हैं कि अनुच्छेद 226 के तहत उच्च न्यायालयों में और संविधान के अनुच्छेद 32 के तहत इस न्यायालय में निहित विधायी कार्रवाई पर न्यायिक समीक्षा की शक्ति संविधान की एक अभिन्न और आवश्यक विशेषता है, जो इसकी मूल संरचना का हिस्सा है।सामान्य तौर पर, इसलिए, विधानों की संवैधानिक वैधता का परीक्षण करने के लिए उच्च न्यायालयों और सर्वोच्च न्यायालय की शक्ति को कभी भी खारिज या बहिष्कृत नहीं किया जा सकता है।80. हम यह भी मानते हैं कि उच्च न्यायालयों में अपने-अपने क्षेत्राधिकार के भीतर सभी न्यायालयों और न्यायाधिकरणों के निर्णयों पर न्यायिक पर्यवेक्षण का प्रयोग करने की शक्ति भी संविधान की मूल संरचना का हिस्सा है।ऐसा इसलिए है क्योंकि ऐसी स्थिति जहां उच्च न्यायालयों को संवैधानिक व्याख्या के अलावा अन्य सभी न्यायिक कार्यों से वंचित कर दिया जाता है, उससे समान रूप से बचा जाना चाहिए।"

(8) इसके बाद सर्वोच्च न्यायालय ने रिकॉर्ड किया -

“अनुच्छेद 1 के तहत उच्च न्यायालयों और संविधान के अनुच्छेद 32 के तहत सर्वोच्च न्यायालय को प्रदत्त अधिकार क्षेत्र हमारे संविधान की अलंघनीय मूल संरचना का हिस्सा है। जबकि इस अधिकार क्षेत्र को समाप्त नहीं किया जा सकता है, अन्य न्यायालय और न्यायाधिकरण संविधान के अनुच्छेद 1 और 32 द्वारा प्रदत्त शक्तियों के निर्वहन में पूरक भूमिका निभा सकते हैं।”

(9) याचिकाकर्ता पक्ष ने "मेसर्स एस. बी. पी. एंड. में उच्चतम न्यायालय की एक अन्य संवैधानिक पीठ के फैसले पर भी भरोसा किया है।

कंपनी बनाम मेसर्स पटेल इंजीनियरिंग लिमिटेड और ए. एन. आर. "सिविल अपील No.4168

2003 से।इस निर्णय में, धारा 5 के तहत मध्यस्थों की नियुक्ति के संबंध में मुख्य न्यायाधीश की शक्ति इस बात पर विचार के लिए सामने आई कि क्या यह प्रशासनिक या न्यायिक शक्ति के प्रयोग में होती है।इस न्यायालय का ध्यान विशेष रूप से निर्णय के पैरा 19 में की गई टिप्पणियों की ओर आकर्षित किया गया था, जिसमें यह उल्लेख किया गया था -

“19. धारा 16 को कोम्पेटेंज़-कोम्पेटेंज़ के सिद्धांत की मान्यता कहा जाता है। तथ्य यह है कि मध्यस्थता न्यायाधिकरण को अपनी अधिकारिता पर शासन करने और अपनी अधिकारिता की रूपरेखा को परिभाषित करने की क्षमता है, इसका केवल यह अर्थ है कि जब ऐसे मुद्दे उसके सामने उत्पन्न होते हैं, तो न्यायाधिकरण उन्हें तय कर सकता है और संभवतः उसे करना चाहिए।यह तब हो सकता है जब पक्षकार अधिनियम की धारा 8 या 11 का सहारा लिए बिना मध्यस्थता न्यायाधिकरण में गए हों। लेकिन जहां इन धाराओं के तहत क्षेत्राधिकार के मुद्दों का निर्णय लिया जाता है, वहां एक संदर्भ दिए जाने से पहले, धारा 16 को न्यायिक प्राधिकरण या मुख्य न्यायाधीश द्वारा दिए गए निर्णय की अनदेखी करने के लिए मध्यस्थ न्यायाधिकरण को सशक्त बनाने के लिए नहीं माना जा सकता है।निर्णय लेने की क्षमता मध्यस्थ न्यायाधिकरण को उस क़ानून द्वारा संदर्भ में प्रवेश करने से पहले पारित आदेश पर प्रदत्त अंतिमता को पार करने में

सक्षम नहीं बनाती है जो इसे बनाता है।यह उस अधिनियम की धारा 11 (7) से उत्पन्न स्थिति है जिसे उसकी धारा 16 के साथ पढ़ा जाता है।अधिनियम की धारा 11 के तहत अपनी क्षमता के भीतर मामलों पर मुख्य न्यायाधीश के आदेश को दी गई अंतिमता, मध्यस्थ न्यायाधिकरण के समक्ष फिर से खोले जाने में असमर्थ है।"

(10) एल. डी. याचिकाकर्ता के वकील ने इस बात पर भी जोर दिया है कि कुछ प्रकार के विवाद स्वाभाविक रूप से अविवेकी हैं, जिस मामले में, संबंधित न्यायालय जिसके समक्ष एक मुकदमा लंबित है, उसके अधिकार के भीतर होगा।

अपने विवादों के निपटारे के लिए मध्यस्थता मंच के रूप में मध्यस्थता का उपयोग करने के लिए उनके बीच किसी भी समझौते के बावजूद, पक्षकारों को मध्यस्थता के लिए संदर्भित करने से इनकार करना।इस निवेदन का समर्थन करने के लिए, "बूज़ एलन और हैमिल्टन"मामले में शीर्ष अदालत के फैसले की ओर अदालत का ध्यान आकर्षित किया गया था।

आई. एन. सी. बनाम एस. बी. आई. होम फाइनेंस लिमिटेड और अन्य। 1, जिसमें यह आयोजित किया गया था -

"नतीजतन, जहां कारण/विवाद अविवेकी है, वह न्यायालय जहां एक मुकदमा लंबित है, अधिनियम की धारा 8 के तहत पक्षकारों को मध्यस्थता के लिए संदर्भित करने से इनकार कर देगा, भले ही पक्षकार ऐसे विवादों के निपटारे के लिए मध्यस्थता पर सहमत हुए हों।गैर-मध्यस्थता विवादों के अच्छी तरह से मान्यता प्राप्त उदाहरण हैं:(i) उन अधिकारों और देनदारियों से संबंधित विवाद जो आपराधिक अपराधों को जन्म देते हैं या उत्पन्न होते हैं; (ii) तलाक, न्यायिक अलगाव, वैवाहिक अधिकारों की बहाली, बाल अभिरक्षा से संबंधित वैवाहिक विवाद; (iii) संरक्षकता के मामले; (iv) दिवालिया और मामलों को समाप्त करना; (v) वसीयती मामले (प्रोबेट, प्रशासन के पत्र और उत्तराधिकार प्रमाण पत्र का अनुदान); और (vi) विशेष कानूनों द्वारा शासित बेदखली या किरायेदारी के मामले जहां किरायेदार को बेदखली के खिलाफ वैधानिक संरक्षण

प्राप्त होता है और केवल निर्दिष्ट अदालतों को बेदखली देने या विवादों का फैसला करने का अधिकार क्षेत्र प्रदान किया जाता है।"

(11) इसी तरह, "हिमांगनी एंटरप्राइजेज बनाम कमलजीत"में

सिंह अहलूवालिया 2, सर्वोच्च न्यायालय ने दक्षिण पूर्व जिला नई दिल्ली के अतिरिक्त जिला न्यायाधीश के फैसले के खिलाफ निर्देशित अपील को खारिज कर दिया, जिसकी दिल्ली उच्च न्यायालय द्वारा पुष्टि की गई थी, जिसके आधार पर, मकान मालिक/किरायेदार द्वारा पट्टेदार/किरायेदार को बेदखल करने के लिए दायर एक मुकदमे में, मध्यस्थता अधिनियम की धारा 8 के तहत प्रतिवादी/किरायेदार का आवेदन यह देखने के बाद खारिज कर दिया गया था -

"23. फिर भी बूज़ ऐलन एंड हैमिल्टन इंक. (ऊपर) के एक अन्य मामले में, इस न्यायालय (दो न्यायाधीशों की पीठ) ने R.V.Raveendran जे. के माध्यम से बोलते हुए इस प्रश्न की जांच करने के बाद कानून का निम्नलिखित प्रस्ताव रखा कि कौन से मामले मध्यस्थ हैं और कौन से गैर-मध्यस्थ हैं:

"36. गैर-मध्यस्थ विवादों के अच्छी तरह से मान्यता प्राप्त उदाहरण हैं: (i) उन अधिकारों और देनदारियों से संबंधित विवाद जो आपराधिक अपराधों को जन्म देते हैं या उत्पन्न होते हैं; (ii) तलाक से संबंधित वैवाहिक विवाद, न्यायिक 1 2011 (5) एस. सी. सी. 532

2 2017(2) आर. सी. आर (किराया) 517 एम/एस इंटरनेशनल कॉइल लिमिटेड। मेसर्स डीएलएफ साइबर सिटी

डेवलपर्स लिमिटेड (सुदीप अहलूवालिया, न्यायामूर्ति)

अलगाव, वैवाहिक अधिकारों की बहाली, बाल अभिरक्षा; (iii) संरक्षकता के मामले; (iv) दिवाला और समापन के मामले; (v) वसीयती मामले (प्रोबेट का अनुदान, प्रशासन के पत्र और उत्तराधिकार प्रमाण पत्र); और (vi) बेदखली या किरायेदारी के मामले विशेष कानूनों द्वारा शासित होते हैं जहां किरायेदार को बेदखली के खिलाफ वैधानिक

संरक्षण प्राप्त होता है और केवल निर्दिष्ट अदालतों को बेदखली देने या विवादों का फैसला करने के लिए अधिकार क्षेत्र प्रदान किया जाता है।"

25. हालाँकि, अपीलार्थी के विद्वान वकील ने तर्क दिया कि दिल्ली किराया अधिनियम, 1955 के प्रावधान अधिनियम की धारा 3 (सी) के आधार पर परिसर पर लागू नहीं होते हैं और इसलिए उपरोक्त दो मामलों में निर्धारित कानून लागू नहीं होगा।हम सहमत नहीं हैं।

26. दिल्ली किराया अधिनियम, जो परिसर के किराए और बेदखली से संबंधित मामलों से संबंधित है, एक विशेष अधिनियम है। यद्यपि इसमें इसके आधार पर एक प्रावधान (धारा 3) है, अधिनियम के प्रावधान कुछ परिसरों पर लागू नहीं होते हैं, लेकिन इसका मतलब यह नहीं है कि मध्यस्थता अधिनियम, वास्तव में, ऐसे परिसरों पर लागू होगा जो मध्यस्थ को बेदखली/किराया विवादों पर निर्णय लेने के लिए अधिकार क्षेत्र प्रदान करता है।ऐसी स्थिति में, पक्षों के अधिकार और नष्ट किए गए परिसर संपत्ति हस्तांतरण अधिनियम द्वारा शासित होंगे और दीवानी मुकदमे की सुनवाई दीवानी अदालत द्वारा की जाएगी, न कि मध्यस्थ द्वारा।दूसरे शब्दों में, हालांकि अधिनियम की धारा 3 के आधार पर, अधिनियम के प्रावधान कुछ परिसरों पर लागू नहीं होते हैं, लेकिन जैसे ही छूट वापस ले ली जाती है या किसी विशेष परिसर में इसका आवेदन बंद हो जाता है, अधिनियम ऐसे परिसरों पर लागू हो जाता है।मामले के इस दृष्टिकोण में, यह तर्क नहीं दिया जा सकता है कि मध्यस्थता अधिनियम के प्रावधान, इसलिए, ऐसे परिसरों पर लागू होंगे।"

(12) नटराज स्टूडियोज (पी) लिमिटेड बनाम नवरंग स्टूडियोज [3] में

सर्वोच्च न्यायालय द्वारा अभिनिर्धारित किया गया-"18. इस प्रकार लघु कारणों के न्यायालय को अनन्य अधिकारिता दी गई है और अन्य न्यायालयों को अधिकारिता से वंचित किया जाता है (1) किसी मकान मालिक और किरायेदार के बीच किसी भी परिसर के किराए या कब्जे की वसूली से संबंधित किसी भी मुकदमे या कार्यवाही पर विचार करने और मुकदमा करने के लिए, (2) किसी भी मुकदमे या कार्यवाही पर मुकदमा करने के लिए 3 1981 (1) एस. सी. सी. 523 84

अनुज्ञप्ति शुल्क या शुल्क की वसूली से संबंधित अनुज्ञप्तिधारक और अनुज्ञप्तिधारक के बीच, (3) अधिनियम के तहत किए गए किसी भी आवेदन पर निर्णय लेने के लिए और (4) अधिनियम या इसके किसी भी प्रावधान से उत्पन्न होने वाले किसी भी दावे या प्रश्न से निपटने के लिए।कुछ मुकदमों पर विचार करने और उनका परीक्षण करने, कुछ आवेदनों पर निर्णय लेने या कुछ दावों या प्रश्नों से निपटने के लिए विशेष अधिकार क्षेत्र का मतलब आवश्यक रूप से अधिकार क्षेत्र के तथ्यों को भी तय करने के लिए विशेष अधिकार क्षेत्र नहीं है।न्यायक्षेत्र संबंधी तथ्यों का निर्णय अनिवार्य रूप से उस न्यायालय द्वारा किया जाना चाहिए जहां न्यायक्षेत्र संबंधी प्रश्न का निर्णय किया जाना है, और यह प्रश्न अनन्य अधिकार क्षेत्र के न्यायालय या न्यायालय या सामान्य अधिकार क्षेत्र के समक्ष निर्णय के लिए आ सकता है।मकान मालिक होने का दावा करने वाला व्यक्ति किराया अधिनियम में निर्दिष्ट आधारों पर अपने कथित किरायेदार पर इमारत के कब्जे के लिए मुकदमा कर सकता है। इस तरह के मुकदमे को लघु कारणों के न्यायालय में लाना होगा, जिसे अनन्य अधिकार क्षेत्र का न्यायालय बनाया गया है।ऐसे मुकदमे में, प्रतिवादी किरायेदारी से इनकार कर सकता है लेकिन प्रतिवादी द्वारा इनकार करने से लघु कारणों के न्यायालय की अधिकारिता समाप्त नहीं होगी।यदि अंततः न्यायालय को पता चलता है कि प्रतिवादी किरायेदार नहीं है तो उस कारण से मुकदमा विफल हो जाएगा।यदि मुकदमा लघु कारणों के न्यायालय के बजाय सामान्य दीवानी न्यायालय में स्थापित किया जाता है, तो प्रतिवादी की याचिका के बावजूद वाद को वापस करना होगा।इसके विपरीत, एक व्यक्ति जो एक इमारत का मालिक होने का दावा करता है और प्रतिवादी पर अतिक्रमण करने का आरोप लगाता है, उसे वाद के आरोपों पर, केवल सामान्य दीवानी न्यायालय में मुकदमा दायर करना होगा।ऐसे मुकदमे में प्रतिवादी यह दलील दे सकता है कि वह एक किरायेदार है न कि अतिक्रमणकारी। प्रतिवादी की याचिका सीधे सामान्य दीवानी न्यायालय की अधिकारिता को समाप्त नहीं करेगी, लेकिन यदि अंततः प्रतिवादी की याचिका स्वीकार कर ली जाती है तो उस आधार पर मुकदमा विफल होना चाहिए।अतः यह प्रश्न कि क्या पक्षकारों के बीच मकान मालिक और किरायेदार का संबंध है या ऐसे अन्य क्षेत्राधिकार संबंधी प्रश्न न्यायालय

द्वारा निर्धारित किए जा सकते हैं जहां यह निर्धारण के लिए आता है-चाहे वह लघु कारणों का न्यायालय हो या सामान्य दीवानी न्यायालय।यदि अधिकारिता संबंधी प्रश्न का निर्णय अनन्य अधिकारिता वाले न्यायालय के पक्ष में किया जाता है तो सामान्य सिविल न्यायालय के समक्ष मुकदमा या कार्यवाही उस हद तक बंद होनी चाहिए जब तक कि इसकी अधिकारिता समाप्त हो जाती है।"

(13) इसके बाद सर्वोच्च न्यायालय ने पक्षों के बीच मूल समझौते में मध्यस्थता खंड को निष्क्रिय मेसर्स इंटरनेशनल कॉइल लिमिटेड घोषित किया।

मेसर्स डीएलएफ साइबर सिटी

डेवलपर्स लिमिटेड (सुदीप अहलूवालिया, न्यायामूर्ति) 85

(24) उन्होंने आगे कहा-"। पूर्वगामी चर्चा और उदाहरणों के अधिकार के आलोक में, हम मानते हैं कि बॉम्बे रेंट, होटल और लॉजिंग हाउस रेट कंट्रोल एक्ट, 1947 की धारा 28 के कारण और हमारे द्वारा पहले उल्लिखित सार्वजनिक नीति के व्यापक विचारों के कारण और डेक्कन मर्चेंट्स कोऑपरेटिव बैंक लिमिटेड बनाम।मेसर्स डालीचंद जुगराज जैन और अन्य (ऊपर), लघु कारण न्यायालय के पास इस प्रश्न पर निर्णय लेने का अधिकार क्षेत्र नहीं है कि क्या प्रत्यर्थी-लाइसेंसधारी-मकान मालिक को अपीलकर्ता-लाइसेंसधारी-किरायेदार से मशीनरी और उपकरणों के साथ दो स्टूडियो और अन्य परिसरों का कब्जा लेने का अधिकार है।मध्यस्थता अधिनियम की धारा 8 के तहत बॉम्बे उच्च न्यायालय में प्रतिवादीगण द्वारा दायर याचिका से यह स्पष्ट है कि पक्षकारों के बीच यह वास्तविक विवाद है।याचिका पक्षकारों द्वारा आदान-प्रदान किए गए नोटिसों को संदर्भित करती है, प्रतिवादी अपीलार्थी से स्टूडियो का कब्जा उसे सौंपने का आह्वान करता है और अपीलार्थी स्टूडियो के संबंध में किरायेदार या संरक्षित लाइसेंसधारी होने का दावा करता है।पक्षकारों के बीच संबंध लाइसेंसर-मकान मालिक और लाइसेंसधारी-किरायेदार का होने के नाते और लाइसेंस प्राप्त ध्वस्त परिसर के कब्जे से संबंधित उनके बीच विवाद, इस निष्कर्ष से कोई मदद नहीं करता है कि अकेले लघु कारण न्यायालय के पास अधिकार क्षेत्र है और मध्यस्थ के पास पक्षकारों के बीच विवाद पर निर्णय लेने के लिए कोई नहीं है।"

(14) एल. डी. हालाँकि, प्रत्यर्थी के वकील ने मैसर्स एस. बी. पी. एंड कंपनी बनाम मैसर्स के मामले में उच्चतम न्यायालय की बाद की संवैधानिक पीठ के फैसले की ओर अदालत का ध्यान आकर्षित किया है।

पटेल इंजीनियरिंग लिमिटेड और अन्र. 2003 की सिविल अपील No.4168।

निर्णय के पैरा 44 से 46 में की गई निम्नलिखित टिप्पणियों की ओर विशेष ध्यान आकर्षित किया गया, जो निम्नलिखित रूप में निर्धारित हैं -

"44. यह देखा गया है कि कुछ उच्च न्यायालयों ने इस आधार पर कार्यवाही की है कि मध्यस्थता के दौरान मध्यस्थता न्यायाधिकरण द्वारा पारित किसी भी आदेश को भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 या 227 के तहत चुनौती दी जा सकती है।हम इस तरह के दृष्टिकोण के लिए कोई वारंट नहीं देखते हैं।धारा 37 माध्यस्थम न्यायाधिकरण के कुछ आदेशों को अपील योग्य बनाती है।धारा 34 के तहत, पीड़ित पक्ष के पास अपने 86 को हवा देने का एक तरीका है

अधिनियम की धारा 16 के तहत कार्य करने वाले मध्यस्थ न्यायाधिकरण द्वारा पारित किए गए किसी भी आदेश सहित पुरस्कार के खिलाफ शिकायतें। मध्यस्थता न्यायाधिकरण के किसी भी आदेश से व्यथित पक्ष को, जब तक कि अधिनियम की धारा 37 के तहत अपील करने का अधिकार न हो, तब तक प्रतीक्षा करनी होगी जब तक कि न्यायाधिकरण द्वारा निर्णय पारित नहीं हो जाता।यह अधिनियम की योजना प्रतीत होती है। आखिरकार, मध्यस्थता न्यायाधिकरण पक्षों के बीच एक अनुबंध, मध्यस्थता समझौते का सृजन है, भले ही अवसर उत्पन्न हो, मुख्य न्यायाधीश पक्षों के बीच अनुबंध के आधार पर इसका गठन कर सकता है।लेकिन इससे मध्यस्थता न्यायाधिकरण की स्थिति नहीं बदलेगी।यह अभी भी पार्टियों द्वारा समझौते द्वारा चुना गया एक मंच होगा।इसलिए, हम कुछ उच्च न्यायालयों द्वारा अपनाए गए इस रुख को अस्वीकार करते हैं कि मध्यस्थता न्यायाधिकरण द्वारा पारित कोई भी आदेश भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 या 227 के तहत उच्च न्यायालय द्वारा सही किए जाने में सक्षम है।उच्च न्यायालयों द्वारा इस तरह के हस्तक्षेप की अनुमति नहीं है।45. न्यायिक

हस्तक्षेप को कम करने का उद्देश्य, जबकि मामला मध्यस्थता की प्रक्रिया में है, निश्चित रूप से विफल हो जाएगा यदि उच्च न्यायालय से भारत के संविधान के अनुच्छेद 227 के तहत या भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत मध्यस्थता न्यायाधिकरण द्वारा दिए गए प्रत्येक आदेश के खिलाफ संपर्क किया जा सकता है।इसलिए, यह इंगित करना आवश्यक है कि एक बार मध्यस्थता न्यायाधिकरण में मध्यस्थता शुरू हो जाने के बाद, पक्षों को तब तक इंतजार करना होगा जब तक कि पुरस्कार घोषित नहीं किया जाता है, जब तक कि निश्चित रूप से, अधिनियम की धारा 37 के तहत उन्हें अपील का अधिकार उपलब्ध नहीं है।46. इसलिए हम अपने निष्कर्षों का सारांश इस प्रकार देते हैं:

(i) से (v) XXX XXX

(vi) एक बार जब मामला मध्यस्थता न्यायाधिकरण या एकमात्र मध्यस्थ तक पहुंच जाता है, तो उच्च न्यायालय मध्यस्थता कार्यवाही के दौरान मध्यस्थता या मध्यस्थता न्यायाधिकरण द्वारा पारित आदेशों में हस्तक्षेप नहीं करेगा और पक्षकार केवल अधिनियम की धारा 37 के संदर्भ में या अधिनियम की धारा 34 के संदर्भ में अदालत का दरवाजा खटखटा सकते हैं।

(15) मैसर्स एस. बी. पी. एंड कंपनी के मामले (उपरोक्त) में सुनाए गए निर्णय में उपरोक्त उल्लिखित उद्धरणों को ध्यान में रखते हुए, इस न्यायालय का यह भी विचार है कि एक मध्यस्थ न्यायाधिकरण में कार्यवाही जिसमें उसका निर्णय मैसर्स इंटरनेशनल कॉइल लिमिटेड बनाम मैसर्स इंटरनैशनल कॉइल लिमिटेड शामिल है।

अपनी अधिकारिता पर निर्णय लेने को संविधान के अनुच्छेद 226 और 227 के तहत उच्च न्यायालय के समक्ष चुनौती नहीं दी जा सकती है, और याचिकाकर्ता पक्ष द्वारा जिस निर्णय पर भरोसा किया गया है, वह निम्नलिखित पैराग्राफ में दर्ज किए गए कारणों से किसी भी तरह से सहायक नहीं होगा।

(16) विडंबना यह है कि "मेसर्स एस. बी. पी. एंड कंपनी". के मामले (उपरोक्त) का अंतिम उल्लेख मूल रूप से याचिकाकर्ता की ओर से मध्यस्थ न्यायाधिकरण की अपनी अधिकारिता पर शासन करने की क्षमता की सीमाओं के संदर्भ में उद्धृत किया गया था, जो कि धारा 16 के प्रावधानों के संबंध में शामिल किया जाने वाला एक विषय है, जिसे पहले भी अलग से उद्धृत किया गया था।लेकिन 26.10.2005 पर दिए गए अपने उपरोक्त निर्णय में संवैधानिक पीठ की टिप्पणियों से, इस बात पर संदेह करने की बहुत कम गुंजाइश बनी हुई है कि मध्यस्थता न्यायाधिकरण द्वारा उसके समक्ष लंबित कार्यवाही के दौरान पारित आदेश या निर्णय में अनुच्छेद 226/227 के तहत उच्च न्यायालय सहित किसी भी न्यायिक प्राधिकरण द्वारा हस्तक्षेप नहीं किया जा सकता है, सिवाय इसके कि जब मध्यस्थता अधिनियम के भाग I में विशेष रूप से प्रावधान किया गया हो। इसलिए संवैधानिक पीठ का उक्त निर्णय स्पष्ट रूप से एल. चंद्र कुमार के मामले (उपरोक्त) में पहले के फैसले को खारिज करता है, जिसमें किसी भी मामले में, विशेष रूप से संशोधित मध्यस्थता अधिनियम के बाद के अधिनियम द्वारा शुरू किए गए न्यायिक हस्तक्षेप पर प्रतिबंध किसी भी विचार के लिए नहीं आ सकता था।

(17) एल. चंद्र कुमार के मामले (ऊपर) में निर्णय था

एक दीवानी अपील के संबंध में संवैधानिक पीठ द्वारा सुनाया गया, जिसे बहुत पहले 1989 में सर्वोच्च न्यायालय में स्वीकार किया गया था।प्रशासनिक न्यायाधिकरण अधिनियम, 1985 के माध्यम से विधान से उत्पन्न विवाद के संदर्भ में संविधान के अनुच्छेदों की प्रयोज्यता इस निर्णय में विचार के लिए सामने आई, जो शीर्ष न्यायालय में अंतिम एसएलपी दायर किए जाने के समय हाल ही में उत्पन्न हुआ था।इस निर्णय के पूर्ववर्ती अनुच्छेद 7 और 8 में उल्लिखित टिप्पणियां न्यायाधिकरणों को स्पष्ट रूप से दी गई शक्ति के संदर्भ में भी थीं, जो संविधान के अनुच्छेद 323-ए और बी के तहत बनाई गई थीं और उक्त अपील में विशेष संदर्भ केंद्रीय प्रशासनिक न्यायाधिकरण के संबंध में भी था, जो हाल ही में उस समय अस्तित्व में आया था।विवाद राज्य के किसी भी अधिनियम की शक्तियों का परीक्षण करने के लिए न्यायाधिकरण को दी गई क्षमता से उत्पन्न हुआ, और यह विशेष रूप से पैरा 8 में स्पष्ट किया गया था, जैसा कि ऊपर पुनः प्रस्तुत किया गया था, कि अनुच्छेद 323-ए और बी के तहत गठित किसी भी न्यायाधिकरण (ओं) के मामले में प्रावधान का अस्तित्व किसी भी तरह से अनुच्छेद 1

के तहत उच्च न्यायालयों को और संविधान के अनुच्छेद 32 के तहत सर्वोच्च न्यायालय को प्रदत्त अधिकार क्षेत्र से दूर नहीं कर सकता है

यह कि अन्य न्यायालय और न्यायाधिकरण इन अनुच्छेदों द्वारा प्रदत्त शक्तियों के निर्वहन में पूरक भूमिका निभा सकते हैं, जबकि इस अधिकार क्षेत्र को समाप्त नहीं किया जा सकता है।

(18) अब यह ध्यान देने की आवश्यकता है कि संशोधित मध्यस्थता अधिनियम 1989 में सिविल अपील स्वीकार किए जाने के लंबे समय बाद अधिनियमित किया गया था, और न्यायिक हस्तक्षेप को रोकने वाली धारा 5 सहित इसके संशोधित प्रावधान अभी तक न्यायिक समीक्षा के लिए नहीं आए थे।लेकिन तब से इस मामले को मैसर्स एस. बी. पी. एंड कंपनी के मामले (उपरोक्त) में बाद की संवैधानिक पीठ के फैसले में व्यापक रूप से सुलझा लिया गया है, जिसमें सर्वोच्च न्यायालय ने विशेष रूप से कहा था कि एक मध्यस्थ न्यायाधिकरण की कार्यवाही को संविधान के अनुच्छेद <आई. डी. 1] के प्रयोग में चुनौती नहीं दी जा सकती है, सिवाय इसके कि जब अधिनियम के तहत ही अधिकृत किया गया हो, और अब इस संबंध में यह तय कानूनी स्थिति है।

(19) जैसा कि इसके बाद पैरा 9 में पहले ही उल्लेख किया जा चुका है, इस न्यायालय का ध्यान उच्चतम न्यायालय के निर्णय के पैरा 19 की ओर आकर्षित किया गया था, जिसमें अनिवार्य रूप से यह अभिनिर्धारित किया गया था कि मुख्य न्यायाधीश (न्यायाधीशों) द्वारा मध्यस्थ की नियुक्ति न्यायिक है न कि प्रशासनिक प्राधिकरण की। लेकिन पैरा 19 में यह विशेष अवलोकन मध्यस्थ कार्यवाही की चुनौतियों को स्वीकार करने के लिए न्यायिक प्राधिकरणों की क्षमता के बारे में वास्तविक प्रश्न से जुड़ा नहीं है, जब संविधान के अनुच्छेद 1 के तहत शक्तियों के प्रयोग में अधिनियम द्वारा स्वयं अनुमति नहीं दी गई है, जिसे, जैसा कि पहले ही उसी निर्णय के बाद के पैरा 44 से 46 में देखा जा चुका है, संवैधानिक पीठ द्वारा अनुमोदित नहीं किया गया है।

(20) ऊपर पैरा 10 में उल्लिखित "बूज़ ऐलन और हैमिल्टन इंक". के मामले (उपरोक्त) में निर्णय के संदर्भ में, यह ध्यान दिया जाना चाहिए कि यह न्यायालय द्वारा मध्यस्थता अधिनियम की धारा 8 के तहत विवाद को मध्यस्थता के लिए संदर्भित करने से इनकार करने की पृष्ठभूमि में सुनाया गया था। उस मामले में किसी भी स्तर पर वास्तविक मध्यस्थ न्यायाधिकरण का गठन नहीं किया गया था।इसलिए किसी भी न्यायिक प्राधिकरण द्वारा मध्यस्थ न्यायाधिकरण की कार्यवाही के खिलाफ किसी भी आवेदन या याचिका पर विचार करने का कोई सवाल ही नहीं था, जबकि वास्तव में, न्यायाधिकरण के वास्तविक गठन के बिना ऐसी कोई कार्यवाही कभी नहीं हो सकती थी।इसलिए, "बूज़"में निर्णय

एलन और हैमिल्टन इंक. का मामला (ऊपर) याचिकाकर्ता के लिए मददगार नहीं है।(21) इसी तरह, "हिमांगनी एंटरप्राइजेज"मामले (ऊपर) में संदर्भित किया गया है।

इससे पहले पैरा 11 में, अतिरिक्त आयुक्त द्वारा मध्यस्थता अधिनियम की धारा 8 के तहत किरायेदार के आवेदन की अस्वीकृति से फिर से कार्यवाही शुरू हुई थी।जिला न्यायाधीश, जिसके फैसले की पुष्टि दिल्ली उच्च न्यायालय के साथ-साथ सर्वोच्च न्यायालय ने भी की थी।इस मामले में, फिर से कोई मध्यस्थ मेसर्स डीएलएफ साइबर सिटी

डेवलपर्स लिमिटेड (सुदीप अहलूवालिया, न्यायामूर्ति)

न्यायाधिकरण का गठन तब से किया गया था जब मध्यस्थता के संदर्भ के लिए आवेदन स्वयं खारिज कर दिया गया था, और इस तरह, इस तरह के गैर-मौजूद मध्यस्थ न्यायाधिकरण के समक्ष कार्यवाही को चुनौती देने का सवाल बिल्कुल भी उत्पन्न नहीं हो सकता था।

(22) नटराज स्टूडियो (पी) लिमिटेड के मामले में (ऊपर), सुप्रीम कोर्ट ने

न्यायालय ने पक्षों के बीच मूल समझौते में निष्क्रिय मध्यस्थता खंड घोषित किया था। सर्वोच्च न्यायालय द्वारा पारित इस निर्णय का अंतिम कार्यात्मक भाग इस प्रकार है -

"28. परिणामस्वरूप दोनों अपीलों को लागत के साथ अनुमति दी जाती है।28 मार्च, 1970 के समझौते में मध्यस्थता खंड को निष्क्रिय घोषित किया गया है।मध्यस्थता के संदर्भ के लिए आवेदन खारिज कर दिया जाता है।"

(23) इस प्रकार यह देखा जाता है कि इस मामले में भी, यह वास्तव में मध्यस्थता के संदर्भ के लिए आवेदन को खारिज करने का मामला था, जिसकी अनुमति उच्च न्यायालय स्तर पर दी गई थी।न्यायाधिकरण द्वारा पारित किसी भी आदेश को चुनौती देना इस निर्णय में फिर से विषय-वस्तु नहीं था और विवाद मध्यस्थता के संदर्भ तक सीमित था।जो भी हो, उच्चतम न्यायालय का यह निर्णय बहुत पहले आई. डी. 1 पर दिया गया था, जो संशोधित मध्यस्थता अधिनियम के लागू होने से 15 साल से भी अधिक समय पहले का है, और इसलिए यह निर्णय भी याचिकाकर्ता के लिए कोई मददगार नहीं हो सकता है।

(24) इस प्रकार यह अभिनिर्धारित करते हुए कि मध्यस्थ न्यायाधिकरण द्वारा पारित कार्यवाहियों/आदेशों को संविधान के अनुच्छेद 226 और 227 के तहत चुनौती नहीं दी जा सकती है, सिवाय इसके कि जब अधिनियम के तहत ही इसकी अनुमति दी गई हो, तो आइए अब यह भी देखें कि क्या मध्यस्थ न्यायाधिकरण की अपनी अधिकारिता पर शासन करने की क्षमता से संबंधित प्रावधानों का संदर्भ याचिकाकर्ता के लिए किसी भी तरह से सहायक हो सकता है।मध्यस्थता अधिनियम की प्रासंगिक धारा 16 को पहले ही पैरा 6 में पुनः प्रस्तुत किया जा चुका है।धारा 16 (2) (3) (4) और (5) का सावधानीपूर्वक अध्ययन मध्यस्थ न्यायाधिकरण की अधिकारिता को चुनौती देता है, या एक याचिका है कि न्यायाधिकरण अपने प्राधिकरण के दायरे से अधिक है, जिसे जल्द से जल्द लिया जाना चाहिए, विशेष रूप से बचाव का बयान प्रस्तुत करने के बाद नहीं, और जैसे ही मामला क्रमशः न्यायाधिकरण के अधिकार के दायरे से बाहर होने का आरोप लगाया जाता है।बेशक, न्यायाधिकरण अपने विवेकाधिकार में धारा 16 (4) के अनुसार ऐसी याचिकाओं को स्वीकार कर सकता है यदि वह देरी को उचित समझता है।लेकिन धारा 16 (5) के अनुसार जहां न्यायाधिकरण इनमें से किसी भी याचिका को खारिज करने का निर्णय लेता है, वहां मध्यस्थता कार्यवाही जारी रखने और मध्यस्थता पुरस्कार देने की आवश्यकता होती है।इसके बाद धारा 16 (6) के अनुसार, पीड़ित पक्ष

अधिनियम की धारा 34 के अनुसार इस तरह के पुरस्कार को अलग करने के लिए आवेदन कर सकता है। इसलिए, यह देखा जाता है

कि धारा 16 भी किसी पक्ष के लिए अंतिम निर्णय पारित करने से पहले मध्यस्थता कार्यवाही को चुनौती देने के लिए किसी भी गुंजाइश पर विचार नहीं करती है, एक बार जब न्यायाधिकरण यह निर्धारित कर लेता है कि उसके पास विवाद पर विचार करने का अधिकार क्षेत्र है।

(25) उपरोक्त कारणों से, इस न्यायालय को स्वयं मध्यस्थ न्यायाधिकरण द्वारा पारित विवादित आदेश में हस्तक्षेप करने का कोई औचित्य नहीं मिलता है, क्योंकि यह अंतिम आदेश नहीं है, बल्कि ऐसी स्थिति में संबंधित विवाद पर विचार करने के लिए न्यायाधिकरण की क्षमता और अधिकार क्षेत्र के प्रश्न तक सीमित है जहां न्यायाधिकरण का गठन बिना किसी न्यायिक हस्तक्षेप के और मध्यस्थता अधिनियम की धारा 8 और 11 के तहत किसी भी आवेदन के अभाव में किया गया था। नतीजतन, मैसर्स एस. बी. पी. एंड कंपनी के मामले (उपरोक्त) में संवैधानिक पीठ के फैसले को देखते हुए, इस न्यायालय के पास विवादित आदेश को किसी भी चुनौती को स्वीकार करने का कोई अधिकार क्षेत्र नहीं है और इसलिए याचिकाकर्ता मध्यस्थ कार्यवाही के निष्कर्ष की प्रतीक्षा करने के लिए बाध्य हैं, जिसके बाद ही वे धारा 34 का उल्लेख करके या अधिनियम के तहत उन्हें ऐसा करने की अनुमति देने वाले किसी अन्य विशिष्ट प्रावधानों को चुनौती दे सकते हैं। (26) अतः वर्तमान पुनरीक्षण आवेदन खारिज कर दिया जाता है।मध्यस्थ न्यायाधिकरण की कार्यवाही पर अंतरिम रोक इस टिप्पणी के साथ खाली हो गई है कि रोक की अवधि को मध्यस्थता अधिनियम की धारा 29 ए के उद्देश्य के लिए न्यायाधिकरण के नुकसान के लिए नहीं गिना जाएगा।

शुभरीत कौर

अस्वीकरण – स्थानीय भाषा में अनुवादित वादी के सिमित उपयोग के लिए है ताकि वह अपनी भाषा में इसे समझ सके और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है ! सभी व्यव्हारिक और अधिकारिक उद्देश्यों के लिए निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रमाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य के लिए उपयुक्त रहेगा !

प्रताप सिंह
(अनुवादक)